

स्वानुभूतिप्रकाश

वीर संवत्-२५३८ : अंक-१८८ वर्ष - १७ : मे-२०१३

श्रावण सुष्ठु १०, रविवार ता. १३-०८-१९७८. बडेनश्रीनां वयनामृत-
१७३ उपर पूज्य गुरुदेवश्री कानज्जस्वामीनुं प्रवचन, प्रवचन-६३

आंभ में किरकिरी नहीं समाती, उसी प्रकार विभाव का अंश हो तब तक स्वभाव की पूर्णता नहीं होती. अल्प संज्वलनकषाय भी है तब तक वीतरागता और केवलज्ञान नहीं होता. १७३.

‘वयनामृत’ १७३, १७२ पूरा हो गया न ? ‘आंभ में किरकिरी नहीं समाती...’ हमारे यहां कक्षा कड़ते हैं, तुम्हारे में किरकिरी कड़ा. आंभ में अक किरकिरी भी नहीं समा सकती. ञटक.. ञटक (करता है). राई जितनी किरकिरी हो फिर भी आंभ में ञटकती, ञटकती है. ‘उसी प्रकार विभाव का अंश हो तब तक स्वभाव की पूर्णता नहीं होती.’ अक तो बात यह है कि जब तक आत्मा में विभाव के अंश की रुचि है तब तक आत्मा को अंतर सन्मुख सम्यग्दर्शन नहीं होता. समज में आया? भगवान् विद्वान्द स्वरूप प्रभु का अनुभव, आदर, आश्रय, विभाव के अंश का भी प्रेम है तो अंतर में अनुभव नहीं हो सकता. उसे सम्यग्दर्शन नहीं हो सकता. समज में आता है ? लैया ! क्यों ऐसा हुआ ? लोग ऐसा कड़ते हैं कि निश्चय के साथ व्यवहार हो और व्यवहार की क्रिया हो तो बराबर वह कथन बराबर है. वह कथन बराबर है और वह बात बराबर है. उसे तो व्यवहार की डोश-उत्साह है. समज में आया ?

१४३ गाथा में कड़ा है न ? १४३ (गाथा), ‘समयसार’. केवली भगवान् दो नय के साक्षी हैं. उन्हें नय नहीं है. उसका अर्थ साक्षी है. समज में आया? अभी तो वह भी तकरार बहुत है न ? १२ वीं गाथा. ‘सुद्धो सुद्धादेसो णादव्वो परमभावदरिसीहि’ अर्थात् जिसे शुद्धनय पूर्ण जानने में आयी जैसे केवली को उसका पक्ष नहीं है. उसका यह अर्थ करते हैं, अभी अर्थ आया है कि शुद्धनय तो जब तक सातवां, आठवां, दसवां गुणस्थान होता है तब शुद्धनय होता है. केवली को शुद्धनय कड़ा है तो वहां नय नहीं है. क्या कड़ा ? वहां आया न ? ‘ववहारदेसिदा पुण जे दु अपरमे द्विदा भावे’ इसका अर्थ उन लोगों ने ऐसा



किया कि जब तक शुद्धनय नहीं है तब तक मात्र व्यवहार है. यौथे, पांचवे, छठे (गुणस्थान में) व्यवहार है, वहां शुद्धनय नहीं है. और केवली को शुद्धनय नहीं है. शुद्धनय जाना हुआ प्रयोजनवान है तो वहां तो नय नहीं है. अंतर में सप्तम गुणस्थान आदि में जब शुद्धनय है उसे जाना हुआ प्रयोजनवान है, ऐसा अर्थ करते हैं. बड़ी विचित्रता हुई है. आहा...! ऐसा नहीं है.

जब आत्मा को राग के कण की रुचि छुटकर, याहे तो शुभराग हो, व्यवहार रत्नत्रय का विकल्प हो, उसका भी अवलंबन और रुचि छुटकर अंतर में अनुभव में जाते हैं तब कोई नयपक्ष और राग रहता नहीं. समज में आया ? अंतर में जब अपना ज्ञायक स्वरूप आत्मा, ज्ञायक-ज्ञान और ज्ञाता जैसे तीन भेद को भी छोड़कर अपने स्वरूप के अनुभव में जाता है तब उसे व्यवहार रखा नहीं तो व्यवहार जाना हुआ प्रयोजनवान है, ये उसे रखा नहीं.

वे लोग ऐसा कहते हैं कि व्यवहार जाना हुआ प्रयोजनवान तो छठवें गुणस्थान तक है, पीछे तो शुद्धनय है. ऐसा नहीं है. आहा...! राग के कण के अंश का भी प्रेम है... वहां ऐसा कहा है न ? कि श्रुतज्ञान के क्षयोपशम से विकल्प उत्पन्न होता है. १४३ गाथा, 'समयसार'. श्रुतज्ञान का क्षयोपशम है उस कारण से ज्ञानी को विकल्प उठता है, परंतु उस विकल्प को पकड़ने का उत्साह निवृत्त हुआ है. आहा...! बात में बहुत डेर है. समज में आया ? पहले यथार्थ क्या चीज है उसका ज्ञान तो करे. आहा...!.

मुमुक्षु :- ...

पूज्य गुरुदेवश्री :- लेकिन वह उत्साह से निवृत्त हुआ है. है सही, लेकिन उसमें उत्साह नहीं, प्रेम नहीं है. आहा...! ये लोग ऐसा कहते हैं कि निश्चय है वहां व्यवहार आता है और व्यवहार से लाभ होता है, ऐसा कहां तो अनेकांत है. यहां तो कहते हैं कि व्यवहार विकल्प आया, अंतर स्वरूप की दृष्टि

हुई, राग की, विकल्प की रुचि छुटकर निर्विकल्प स्वभाव की अनुभव दृष्टि हुई, तब तो उसमें विकल्प है नहीं. लेकिन अनुभव होने के बाद अंदर में रह सकते नहीं और बाहर आये तो विकल्प तो उत्पन्न होता है— श्रवण का, मनन का, कथन का, भक्ति का इत्यादि, लेकिन उस विकल्प प्रति उत्साह निवृत्त हुआ है. वह ठीक है, मुझे लाभदायक है जैसे उत्साह से निवृत्त है. आहा...! यह बात कैसे (बैठे) ? समज में आया ? आता है, सम्यग्दृष्टि को भी जब तक पूर्ण वीतराग न हो तब तक राग आता है, दया का, दान का, भक्ति का, पूजा का (राग आता है), परंतु अंतर दृष्टि के विषय में राग को पकड़ना उस उत्साह से निवृत्त हो गये हैं. एक बात. और अनुभव-काल में तो कोई विकल्प है ही नहीं. समज में आया ? आहा...! बहुत सूक्ष्म बात, भाई ! वीतराग मार्ग जिनेश्वर परमेश्वर का पंथ अलौकिक चीज है.

यहां कहते हैं कि (आंभ में) किरकिरी नहीं समाती. भगवान आत्मा आनंद चिदानंद स्वरूप, उसके अनुभव में सम्यग्दर्शन होने में राग का कण भी वहां सहायक नहीं होता. वहां राग का कण भी भटकता है. आहा...! समज में आया ? आहा...! यहां तो दूसरी बात कहते हैं. 'आंभमें किरकिरी नहीं समाती...' एक रजकण भी नहीं रह सकता, समा सकता नहीं.

'उसी प्रकार विभाव का अंश हो तब तक स्वभाव की पूर्णता नहीं होती.' आहा...! व्यवहार रत्नत्रय का विभाव का अंश जब तक हो... आहा...! तब तक पूर्णता-आनंद की दशा और केवलज्ञान की पूर्ण प्राप्ति तब तक नहीं होती. तो व्यवहार करनेवायक है ऐसा कर्तव्य है ? आता है और परिणामन है इसलिये कर्ता है, ऐसा भी कहने में आता है. परिणामता है इसलिये कर्ता है, ऐसा ज्ञानी को भी कहने में आता है. लेकिन करनेवायक है ऐसी बुद्धि नहीं रहती. आहा...! ऐसी बातें हैं. समज में आया ? वह करनेवायक है ऐसी बुद्धि छूट गई.

અરે..! મੈં શુદ્ધ હું, પરિપૂર્ણ હું, અબંધ હું, એસા જો વિકલ્પ, રાગ હૈ વહ ભી છૂટ ગયા તબ નિર્વિકલ્પ દષ્ટિ કા અનુભવ હોતા હૈ. આહા..હા..!

સ્વભાવ સહજાનંદ પ્રભુ, ઇસકા અનુભવ કબ હોતા હૈ ? સમ્યગ્દર્શન, અનુભવ કહો, દર્શન સમ્યક્ કહો, અનુભૂતિ-સ્વભાવ કી અનુભૂતિ કહો (કબ હોતી હૈ) ? પૂર્ણ ચિદાનંદ ભગવાન આત્મા કી અનુભૂતિ-સ્વભાવ કા અનુસારણ કરકે જો આનંદ કી દશા હોતી હૈ, ઉસમેં વિકલ્પ કા અંશ ભી સહાયક નહીં. આહા..! એક વિકલ્પ કે અંશ કી ભી રુચિ રહે તબ તક અનુભૂતિ, સમ્યગ્દર્શન નહીં હોતા. ઔર બાદ મેં રુચિ નહીં, દષ્ટિ નહીં હૈ, ઉત્સાહ-યહ ઠીક હૈ, એસા ઉત્સાહ ભી નિવૃત્તિ હુઆ હૈ, લેકિન રાગ હૈ સહી, ઉસ રાગ કા અંશ ભી જબ તક રહે તબ તક સ્વભાવ કી પૂર્ણતા પ્રાપ્ત નહીં હોતી. આહા..હા..! સમજ મેં આયા ?

અરે..! આઠ વર્ષ કા બાલક હો (વહ ભી) સમ્યગ્દર્શન પાકર કેવલજ્ઞાન પાતે થે. આહા..હા..! અરે..! પ્રભુ ! તેરે મેં ઇતની તાકત હૈ ! ઉસે કોઈ ઉમ્મ કી જરૂરત નહીં. આહા..હા..! ભગવાન શાશ્વત વસ્તુ પડી હૈ ન અંદર ! નિત્યાનંદ કા નાથ, સહજાત્મ સ્વરૂપ સહજ આત્મ સ્વરૂપ, એસી ત્રિકાલી શાશ્વત વસ્તુ હૈ. ઉસકો દષ્ટિ મેં લેકર અનુભવ હોતા હૈ ઔર ઉસમેં સ્થિર હોકર કેવલજ્ઞાન હોતા હૈ. આહા..હા..! આઠ વર્ષ કા બાલક રાજકુમાર હો, લેકિન અંતર પૂર્ણ વસ્તુ હૈ ન ! આહા..હા..! લેકિન ઉસ ચીજ મેં જાના, દષ્ટિ કરના યહ કોઈ અલૌકિક ચીજ હૈ. આહા..હા..!

રાગ કે વિકલ્પ સે ભી હટકર નિર્વિકલ્પ સ્વભાવ કી દષ્ટિ હો તબ આત્મા કી અનુભૂતિ હોતી હૈ. અનુભૂતિ નામ આત્મા સ્વભાવ સહજાનંદ પ્રભુ, ઉસકે અનુસાર દશા હોતી હૈ. વહ હોને કે બાદ ભી જબ તક રાગ કા અંશ રહતા હૈ તબ તક પૂર્ણતા નહીં હોતી. આહા..હા..! સમજ મેં આયા ? પહલે રાગ કે અંશ મેં રુચિ રહતી હૈ તબ તક સમ્યગ્દર્શન નહીં હોતા ઔર બાદ મેં રાગ કી આસક્તિ કા અંશ ભી રહે તબ તક પૂર્ણતા-કેવલજ્ઞાન નહીં હોતા. એસા માર્ગ હૈ.

મુમુક્ષુ :- સમ્યગ્દર્શન કે એક સમય પહલે દુઃખ કા અનુભવ હૈ યા સુખ કા અનુભવ હૈ ?

પૂજ્ય ગુરુદેવશ્રી :- સમ્યગ્દર્શન કે પહલે દુઃખ કા અનુભવ હૈ. વિકલ્પ હૈ ન ! ઉસ વિકલ્પ કો તોડકર અંદર જાતે હેં તબ આનંદ કા અનુભવ હોતા હૈ. અરે..! યહાં તક કહા ન ? મੈં શુદ્ધ અબંધ મુક્તસ્વરૂપ હું, શાશ્વત ચિદ્ધન અસ્તિ તત્ત્વ હું, એસા વિકલ્પ ઉઠતા હૈ વહ ભી દુઃખરૂપ હૈ. આહા..હા..! ૧૪૩ ગાથા મેં આયા હૈ ન ? વ્યવહાર કા તો હમ નિષેધ કરતે આયે હેં.. 'સમયસાર' ૧૪૨ ગાથા, વ્યવહાર કા નિષેધ તો હમ કરતે આયે હેં પરંતુ હમ તો અભી (એસા કહતે હેં), શુદ્ધ ચૈતન્યધન અખંડ અભેદ શાશ્વત વસ્તુ કા વિકલ્પ રહતા હૈ, ઉસકા ભી હમ નિષેધ કરતે હેં. એસા નય કા પક્ષ રહેગા તબ તક સમ્યગ્દર્શન નહીં હોગા.

મુમુક્ષુ :- એક સમય પહલે તો સ્વભાવ કી મહિમા..

પૂજ્ય ગુરુદેવશ્રી :- દુઃખ હૈ, દુઃખ હૈ, રાગ હૈ ને!

મુમુક્ષુ :- હૈ તો સ્વભાવ કી મહિમા..

પૂજ્ય ગુરુદેવશ્રી :- મહિમા આવી તબ તો સમ્યગ્દર્શન હો ગયા. મહિમા કિસકો કહે ? મહિમા, યહ અચ્છા હૈ, એસા વિકલ્પ આયા, ઇસ મહિમા કા વિકલ્પ આયા વહ તો દુઃખરૂપ હૈ. આહા..હા..! સૂક્ષ્મ બાત હૈ, ભાઈ ! અદ્ભુત વસ્તુ હૈ, અનુભવ પહલે એસા વિકલ્પ આયા (વહ દુઃખરૂપ હૈ). ઇસીલિયે તો કહા, સમ્યગ્દષ્ટિ કો અનુભવ હોને કે બાદ ભી વિકલ્પ તો આતા હૈ, લેકિન ઉસે યહ મેરી ચીજ હૈ, એસા ઉત્સાહ નિવૃત્ત હો ગયા હૈ, જાનનેવાલા રહ ગયા હૈ. સૂક્ષ્મ બાત હૈ, ભાઈ ! આહા..હા..! યહ તો વીર કા પંથ હૈ, કાયર કા કામ નહીં યહાં. આહા..! લોગ ચાહે જો કહે, એસા હૈ, વૈસા હૈ. ભાઈ હૈ ન ? ઉસને ભાઈ કી તારીફ કી હૈ, આપ અબ નિશ્ચય કે સાથ વ્યવહાર લેને લગે, ઇસલિયે બહુત અચ્છી બાત હૈ. બાત યહ હૈ કિ વ્યવહાર આયે તો વહ ઠીક હૈ, એસા ઉસકા ભાવ હૈ. આહા..હા..! વ્યવહાર આતા હૈ તો ખુશ હોતા

है, लेकिन व्यवहार आया वह तो राग है. अरे...! प्रभु ! गुण-गुणी का भेद,... 'परमात्म प्रकाश' में निश्चय के दो भेद लिये हैं न ? निश्चय एक पूर्णानंद है, ऐसा विकल्प (आये) वह भी एक निश्चय का विकल्प है. वह आस्रव है और अंदर निश्चय निर्विकल्प हुआ वह अनास्रव और संवर है. ऐसी बात है, भाई ! वादविवाद से पार नहीं आता. आडा..डा..!

सहज स्वरूप शाश्वत चैतन्यधन प्रभु, जिसमें विकल्प का अवकाश नहीं. जैसे आंभ में किरकिरी नहीं समाती, वैसे भगवान आत्मा में राग का अंश नहीं. और ऐसा अनुभव हुआ बाद में भी राग का कण अस्थिरता का रहता है, तब तक पूर्णता की प्राप्ति नहीं होती. राग के कण से पूर्णता की प्राप्ति नहीं होती. उसका अभाव करने से पूर्णता प्राप्त होती है. बात तो ऐसी है, भापू ! सत्य तो यह है. उसे कहीं भी कूछ भी न्यूनता लगा दे तो तुझे कलंक लगेगा, भाई ! आडा..डा..!

वीतरागमूर्ति प्रभु, स्वयं वीतराग बिंब है, जिनबिंब आत्मा है, उसमें अनुभव में कोई विकल्प का अंश जो दूःखरूप है उसकी सहाय, मदद बिलकुल नहीं. आडा..डा..! यहां कलते हैं कि प्रथम तो सम्यग्दर्शन में राग के कण का अंश का प्रेम रह गया तो सम्यग्दर्शन नहीं होता. एक बात. बाद में 'उसी प्रकार विभाव का अंश हो तब तक स्वभाव की पूर्णता नहीं होती.' बराबर है ? आडा..डा..! समज में आया ?

'अल्प संज्वलन कषाय भी...' संज्वलन-चौथे कषाय का थोडा अंश. आडा..डा..! बुद्धिपूर्वक पंच महाव्रत आदि का विकल्प है वह भी नुकसान करनेवाला है. आडा..डा..! वह आगे बढ़ने नहीं देता. आडा..डा..! और सप्तम (गुणस्थान में) अंदर ध्यान में गये तो भी अबुद्धिपूर्वक का राग रहा, तब तक पूर्णता प्राप्त नहीं होती. समज में आया ? ऐसा वीतराग का मार्ग है, भाई ! सर्वज्ञ परमात्मा की दिव्यध्वनि में तो यह आया है. बाकी सब अपने घर की गडबड करे..

'अल्प संज्वलन कषाय भी है तब तक

वीतरागता और केवलज्ञान नहीं होता.' यहां कलते हैं कि राग आता है तो बराबर अस्था आया. निश्चय के साथ व्यवहार आया तो अस्था आया, लेकिन व्यवहार आया वह नुकसानकारक आया है. ज्ञानी को डेयबुद्धि से राग आता है, आता है. समज में आया ? आडा..डा..! पूर्ण अतीन्द्रिय ज्ञान का.. भाई ! उसे मावूम नहीं. भाई ! प्रभु ! तेरी यीज अतीन्द्रिय आनंद और अतीन्द्रिय वीतराग स्वभाव से भरपूर भरी है. आडा..डा..! ऐसी यीज को विकल्प का सहाय हो तो सम्यग्दर्शन होता है, ऐसा है नहीं. और बाद में विकल्प का सहाय हो तो केवलज्ञान होता है, (ऐसा है नहीं). ऐसी यीज है, भाई !

मुमुक्षु :- तो फिर है क्या ?

पूज्य गुरुदेवश्री :- यह है, वस्तु यह है. आडा..डा..! उसे ज्ञान में ऐसा निर्धार पडले करना पडेगा, प्रभु ! यदि ज्ञान में निर्धार में डेरडार डोगा तो अंतर में जा नहीं सकेगा, दरबार में नहीं जा सकेगा. अंदर ठोडे ठोडे राग का प्रेम और रस रहा, वह चैतन्य के रस में घूस नहीं सकता. ऐसी बात है, प्रभु ! क्या हो ? 'तब तक वीतरागता और केवलज्ञान नहीं होता.' १७३ (बोव) पूरा हुआ.

'वचनामृत' की प्रशंसा बहुत आयी है. 'आत्मधर्म' हिन्दी पुस्तक आता है न ? उसमें कुछ लोग ने लिखा है, बहुत अस्था है. भाई ! शांति से आग्रह छोडकर, सत्य क्या है, ऐसा ज्ञान करे तो उसे पता लग जाये. आडा..डा..! कि यह बात ही सत्य है. बाकी सब व्यवहार से होता है, व्यवहार आता है तो डमें ठीक लगता है (वह सब विपरीतता है).

आठवीं गाथा में तो ऐसा कहा, कि मुनिराज संतो या ज्ञानी आत्मा, दूसरे को आत्मा कहा लेकिन वह आत्मा का अर्थ समजा नहीं तो मुनिराज स्वयं, कहनेवाला दूसरा था, अपने निश्चय सहित व्यवहार में आये, तब उसका अर्थ उसे बताया कि दर्शन, ज्ञान, चारित्र को प्राप्त हो वह आत्मा. आडा..डा..! आया है न? 'शशीभाई' ! आठवीं गाथा. आडा..डा..!

દ્વિગંબર સંતો કી વાણી, દુનિયા મેં કહીં કોઈ વસ્તુ, કોઈ માર્ગ કે સાથ ઉસકા મેલ ખાયે ઐસા નહીં હૈ. વીતરાગી વાણી વીતરાગ કે ભાવ સે નિકલી હુઈ વાણી હૈ. આહા...! ઐસા કહતે હેં.. આહા..હા..! આત્મા મેં જબ તક રાગ કા અંશ રહા, આતા હૈ. રાગ કે અવલંબન બિના ચૈતન્ય કે અવલંબન સે આત્મા કા અનુભવ હુઆ, બાદ મેં ભી રાગ તો રહતા હૈ. રુચિ ઉસમેં સે હટ ગઈ, લેકિન અસ્થિરતા રહ ગઈ. સમજ મેં આયા ? જબ તક અસ્થિરતા રહ ગઈ, તબ તક કેવલજ્ઞાન ઔર વીતરાગતા નહીં હોતી. જબ તક વ્યવહાર કા વિકલ્પ આતા રહેગા તબ તક વીતરાગતા નહીં હોગી. આહા..હા..! અરે..! ઐસા માર્ગ. અરે..! ઇસકા નિર્ણય ઔર અનુભવ કરને કે લિયે યહ મનુષ્યભવ મિલા હૈ.

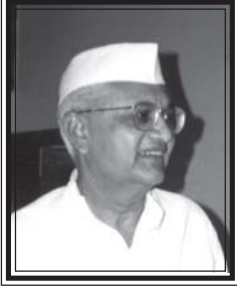
‘છ ઢાલા’ મેં તો ઐસા કહા, કિ જેસે ચિંતામણિ કી પ્રાપ્તિ હો ઐસે નિગોદમેં સે ત્રસ કી પ્રાપ્તિ ચિંતામણિ સમાન હૈ, ભાઈ ! અરે..રે...! વહાં અનંત.. અનંત.. અનંત.. અનંત... અનંત.. કાલ નિગોદ કી દશા ! આહા..હા..! શબ્દ તુમ્હે ઠીક નહીં લગેંગે. અંદર શબ્દ કા માહાત્મ્ય ક્યા હૈ ? અનંત અનંત એક શરીર મેં નિગોદ ઔર જિસકે જ્ઞાન કા ઉઘાડ એક અક્ષર કે અનંતવેં ભાગ મેં, ઉસકે દુઃખ કી વેદના, આહા..હા..! આનંદ કા નાથ અંદર બિરાજતા હૈ લેકિન પર્યાય મેં અક્ષર કે અનંતવાં ભાગ, એક શરીર મેં અનંત આત્મા ! આ..હા..! ક્યા હૈ યહ ? ઉસમેં સે નિકલકર ત્રસપના પ્રાપ્ત કરના વહ ચિંતામણિ સમાન હૈ. અરે..! ભાઈ ! તુજે કીમત નહીં. કીમત ક્યોં નહીં હૈ ? ધર્મ કરને કે લિયે. મનુષ્યપના મિલા વહ કોઈ ભોગ કે લિયે યા વિષય કે લિયે, વ્યાપાર કરને કે લિયે યહ મનુષ્યપના

હૈ ? સમજ મેં આયા ?

‘ગોમ્મટસાર’ મેં તો ઐસા લિખા હૈ, મનુષ્ય કિસે કહેં ? જ્ઞાયતે ઇતિ મનુષ્ય. જાનનેવાલા હો વહ મનુષ્ય હૈ, બાકી પશુ હૈ. આહા..હા..! ચૈતન્યમૂર્તિ ભગવાન પૂર્ણ આનંદ ઔર જ્ઞાન કા સાગર નાથ, શાશ્વત વસ્તુ અંદર બિંબ, જિસકે કર્તૃત્વ મેં કોઈ હૈ નહીં, ઉસકા કોઈ કર્તા નહીં, ઉસકી કોઈ આદિ નહીં, ઔર ઉસ શાશ્વત વસ્તુ કા કોઈ અંત નહીં. ઇસ શાશ્વત વસ્તુ મેં અનંત શક્તિયાં હેં ઉસ શક્તિયોં કા અંત નહીં. વર્તમાન મેં, હાં ! શક્તિ કા અંત નહીં હૈ. આદિ ઔર અંત નહીં, ભૂત ઔર ભવિષ્ય વહ દૂસરી બાત હૈ. લેકિન આત્મા મેં જો અનંત શક્તિયાં-ગુણ હેં, ઉસ ગુણ કા વર્તમાન મેં અંત નહીં કિ યહ અંતિમ ગુણ રહ ગયા. આહા..હા..!

પ્રભુ ! ચૈતન્યદ્રવ્ય સ્વરૂપ ભગવાન, જિસકી શુરૂઆત નહીં, જિસકા અંત નહીં ઔર વર્તમાન મેં ઉસકે અનંત ગુણ કા છેડા-અંત નહીં. આહા..હા..! આ..હા..હા..! ક્યા ચીજ હૈ યહ ? સમજ મેં આયા ? ઐસી ચીજ કો પ્રાપ્ત કરના. રાગ કે કણ કા ભી પ્રેમ છૂટ જાયે તબ ઉસે અનુભવ હોગા. આહા..હા..! બાદ મેં રાગ કા, વ્યવહાર કે રાગ કા કણ આતા હૈ, અરે..! સાતવેં, આઠવેં, નવવેં, દસવેં ગુણસ્થાન મેં અબુદ્ધિપૂર્વક કા રાગ રહેગા તબ તક કેવલજ્ઞાન નહીં હોગા. આહા..હા..! રાગ આયા હૈ વહ ઠીક હૈ, સહાયક હૈ, ઐસા હૈ ? આહા..! યહ તો અકેલા મકખન હૈ ! આહા..હા..!

ટ્રસ્ટના ‘સ્વાનુભૂતિપ્રકાશ’ના આ ગુજરાતી અંક (મે-૨૦૧૩નું) શુલ્ક શ્રી શાંતિલાલભાઈ ડેડિયા (૦૯૮૨૦૨૨૮૨૭૯)ના નામથી સાભાર પ્રાપ્ત થયું છે, જેના કારણે આ અંક બધા પાઠકોને મોકલવામાં આવ્યો છે.



શ્રી પરમાગમસાર, વચનામૃત-૩૭૫ ઉપર
પૂજ્ય ભાઈશ્રી શશીભાઈનું પ્રવચન,
પ્રવચન નં. ૧૮૧ (તા.૨૪-૧૦-૧૯૮૩, ભાવનગર)

પ્રશ્ન :- ઘણા વખતથી તત્ત્વનો અભ્યાસ કરવા છતાં આત્મા પ્રાપ્ત કેમ થતો નથી ?
ઉત્તર :- આત્મા અતીન્દ્રિય આનંદનો નાથ પ્રભુ છે, એના અતીન્દ્રિય આનંદની તાલાવેલી જાગે, આત્મા સિવાય બીજે ક્યાંય મીઠાશ લાગે નહિ, બીજે ક્યાંય રસ પડે નહિ. જગતના પદાર્થોનો રસ ફીકો લાગે, સંસારના રાગનો રસ ઉડી જાય. અહો ! જેના આટલા આટલા વખાણ થાય છે એ આત્મા અનંતાનંત ગુણોનો પુંજ પ્રભુ છે કોણ ? એમ આશ્ચર્ય થાય, એની લગની લાગે, એની ધૂન ચડે એને આત્મા મળેજ, ન મળે એમ બને જન હીં. જેટલું કારણ આપે એટલું કાર્ય આવે. કારણ આપ્યા વિના કાર્ય આવતું નથી. કારણની કયાશના લઈને કાર્ય આવતું નથી. આત્માના આનંદસ્વરૂપની અંદરથી ખંખેરી લગની લાગે, તાલાવેલી લાગે, સ્વપ્નમાં પણ એનું એ જ રહે, તેને આત્મા પ્રાપ્ત થાય જ. ૩૭૫.

૩૭૫. પ્રશ્ન છે. ‘ઘણા વખતથી તત્ત્વનો અભ્યાસ કરવા છતાં આત્મા પ્રાપ્ત કેમ થતો નથી ?’ આપણા સમાજમાં આ પ્રશ્ન અનેક જગ્યાએ બહાર જઈએ છીએ તો પૂછે છે કે અમે તત્ત્વજ્ઞાનનો અભ્યાસ વળી ગુરુગમે જે કાંઈ પદ્ધતિ શરૂ થઈ છે એ પ્રકારે (કરીએ છીએ), નહિતર તો તત્ત્વજ્ઞાનનો અભ્યાસ પોતાની માન્યતાને અનુકૂળ હોય તો એમ તો અનેક બીજા જીવો પણ કરે છે, એમાં વિદ્વતા પણ પ્રાપ્ત કરે છે, ખ્યાતનામ વિદ્વાનો પણ ગણાય છે પણ એમ નહિ. અમે તો જ્ઞાની ગુરુએ જેવી રીતે જે સિદ્ધાંતો સમજાવ્યા તે સિદ્ધાંતો સમજીને એ રીતે તત્ત્વજ્ઞાનનો અભ્યાસ કરીએ. આપણે જે રીતે ચાલે છે એ રીતે ગણાવવું ને.

એમ ‘અભ્યાસ કરવા છતાં આત્મ પ્રાપ્ત કેમ થતો નથી ?’ એટલે અનુભવ કેમ થતો નથી. આ પ્રશ્ન ઉઠાવ્યો છે. આ પ્રશ્ન Ajenda ઉપર છે અત્યારે. ઉત્તર

આપે છે. જો ભાઈ ! તપાસી લે. આત્મા પ્રાપ્ત થનારની દશા કેવી હોય એને તપાસ. આ અમે તને કહીએ છીએ. મેળ ખાય છે તારે ? તારી દશા સાથે આનો કોઈ મેળ ખાય છે ? બસ ! આટલું તપાસવાનું છે. મેળવણી એટલે મેળવવું ખાલી, એ સિવાય બીજી વધારે વાત એમાં નથી.

‘ઉત્તર :- આત્મા અતીન્દ્રિય આનંદનો નાથ પ્રભુ છે, એના અતીન્દ્રિય આનંદની તાલાવેલી જાગે, આત્મા સિવાય બીજે ક્યાંય મીઠાશ લાગે નહિ, બીજે ક્યાંય રસ પડે નહિ.’ આ શુભભાવ આવે એમાં એને મીઠાશ ન લાગે એમ કહે છે. ઠીક ! આ સ્વરૂપનું ચિંતવન-મનન થાય એમાં એને મીઠાશ ન લાગે. તત્ત્વજ્ઞાન વિષયક વિકલ્પની પ્રવૃત્તિ થાય એમાં એને મીઠાશ ન લાગે એમ કહેવું છે. બીજી વાત તો બીજા બધા પરિણામ, શુભ પરિણામ, ત્યાગ-વૈરાગ્યના એ તો એથી

નીચેની કક્ષાના છે પણ ઊંચામાં ઊંચી કક્ષાના આત્મા વિષયક, પરમાત્મપદ સ્વભાવ, પરમાત્મસ્વભાવ, એને વિકલ્પમાં લે તોપણ એ વિકલ્પમાં એને મીઠાશ ન લાગે એમ કહેવું છે. કેમ ન લાગે ? કે પોતે અતીન્દ્રિય આનંદનો નાથ એટલે પરિપૂર્ણ આનંદનું સ્વરૂપ છે. એમાંથી આનંદની ઉત્પત્તિ થાય અને અનુભવમાં આવે. એ આનંદ એને જોઈએ છે. કષાયની મંદતાનો આનંદ એને નથી જોઈતો, એમ કહે છે. કોઈ Artificial ચીજમાં એ છેતરાવા માગતો નથી.

આ રેશમી કાપડ આવે છે ને ? Art silk કહે છે એને. બહુ ચમક મારે. ચોખ્ખું જે રેશમ હોય એના કરતાં પણ વધારે સુવાળું અને વધારે ચમકદાર અને ભભકદાર લાગે. અને પાછા સાચા રેશમથી ઓછા ભાવે મળે. લ્યો ! Double ફાયદો. શોભા વધારે અને કિંમત ઓછી. ભાઈ ! છેતરાય ગયો. એટલા પૈસા પણ તારા નકામા ગયા. શું કહે છે કે, ભાઈ ! જા તું ઘરે જા. ધોવે અને સાથે સાથે રોવે. એમ કહે છે કે ધોવે અને રોવે. કેમ થયું ? નકામી ચીજ નીકળી.

એમ શાતાનું સુખ છે, શુભભાવમાં ઊપજતું શાતાનું સુખ છે એમાં સાચો મુમુક્ષુ છેતરાતો નથી અને છેતરાય તે સાચો મુમુક્ષુ નથી. મુમુક્ષુ એટલે મોક્ષની ઇચ્છાવાળો, પરિપૂર્ણ શુદ્ધતાની ઇચ્છાવાળો.

મુમુક્ષુ :- એ તો કલમ આવી ગઈ છે. એ કલમ તો નાખી છે.

પૂજ્ય ભાઈશ્રી :- મૂળ વાત જ એ છે. પહેલું આ નક્કી કરે. નહિતર એનું એક પગલું સાચું નથી. આ સીધી વાત છે. એકેય પગલું એ ભરે છે, બહાર ડગ ભરે છે એ ખોટી દિશામાં જાય છે.

કહે છે કે અતીન્દ્રિય આનંદની જેને તાલાવેલી લાગી છે, અનુભવનો આનંદ જેને જોઈએ છે, આત્માનંદ જેને જોઈએ છે એ બીજે ક્યાંય છેતરાવા માગતો નથી. આટલું વ્રત કર્યું, આટલું તપ કર્યું, આટલું ફલાણું (કર્યું), આટલા આત્માના વિચાર, વિકલ્પ અને ચિંતવન કર્યાં, શાસ્ત્રવાંચન કર્યું. જ્ઞાનની ક્રિયા અને તપની ક્રિયા બેય કરી. આપણે આમાં એ વિષય ચર્ચો છે ને ?

જ્ઞાનમાર્ગ અને ક્રિયામાર્ગ. બે માર્ગો જીવ આગળ વધે છે. મોક્ષમાર્ગમાં આત્માનું હિત કરવાની ઇચ્છાથી બહુભાગ જીવો કેટલાક જ્ઞાનમાર્ગે અને કેટલાક ક્રિયામાર્ગે આગળ વધે છે. જ્ઞાનમાર્ગે આગળ વધે છે તે ઘણા શાસ્ત્રોનું અધ્યયન કરવું, વાંચવું, સાંભળવું, વિચારવું, એવી ક્રિયામાં પડે છે. ક્રિયામાર્ગે આગળ વધનારા જીવો અનેક પ્રકારના બાહ્ય વિષયોનો અને બાહ્ય પદાર્થોના ત્યાગમાં આગળ વધે છે. પણ જ્યાં સુધી અતીન્દ્રિય આનંદની પરમઅવગાઢ દશા થયા વિના. એ શબ્દ વાપર્યો છે. સ્વરૂપની ભાવનાની અવગાઢ દશા પ્રાપ્ત થયા વિના એટલે પૂરી ભાવના ઉત્પન્ન થાય. અહીં તાલાવેલી શબ્દ વાપર્યો. ચટપટી ચાલે જેને એમ કહે છે. અત્યારે જ જોઈએ. ચટપટીનો અર્થ એ છે. મોડું થાય એ પાલવે નહિ. એને ચટપટી કહે છે. એ બધી જે રસ્તે જવાની જે કાંઈ એણે પ્રવૃત્તિ કરી છે એ બધી પ્રવૃત્તિ એને કાંઈકને કાંઈક દૂષણનું કારણ થઈ પડે છે. કેમકે અનાદિનો પર્યાયદષ્ટિ જીવ છે એ પર્યાયના અસત્ અભિમાનમાં આવ્યા વિના રહેશે નહિ. આ કર્યું મેં, આ ત્યાગ્યું, મેં આટલું વાંચ્યું. આટલું જ્ઞાન મને મળ્યું. અને આટલી મને કષાયની મંદતા રહે છે એ જ્ઞાનનું ફળ પણ મને મળ્યું. પહેલા કષાયની તીવ્રતા થતી હતી, હવે તીવ્રતા એટલી થતી નથી. એટલું ફળ પણ મને મળ્યું. કહે છે કે એ બધી વાત છેતરામણી છે. એમાં ક્યાંય છેતરાવા જેવું નથી.

અહીંથી વાત ઉપાડી છે કે પોતે આનંદસ્વરૂપ છે એમાંથી એનો આનંદ ન મળે અને બીજે ક્યાંય એ આનંદ મળ્યા સિવાય એને એમ લાગ્યું કે ના આ ઠીક કર્યું અને ઠીક થયું. (તું) ભૂલ્યો, કહે છે. એને આત્માનો આનંદ જોઈતો નથી. સીધી વાત એ છે કે એને આત્માનો આનંદ જોઈતો નથી. આમ છે. પણ ચોખ્ખું એને એ ન સમજાય એટલે એને એમ થાય કે ના, ના આ પણ જોઈએ છે અને આ પણ જોઈએ છે. આત્માનો આનંદ તો જોઈએ જ છે પણ એ પહેલા આત્માના વિચારમાં શાંતિ તો લાગે જ છે. એ શાંતિ પણ જરૂરી તો છે જ. પહેલા એવી શાંતિ પણ આવવી

તો જોઈએ અને એ આપણને આવી રહી છે.

મુમુક્ષુ :- સંતોષાઈ જાય છે.

પૂજ્ય ભાઈશ્રી :- સંતોષાઈ જાય છે, એની ગણતરી થાય છે, કેટલું કર્યું એમ કરું છું એ જે ગણતરીનો વિષય છે એ એના સંતોષને જ પ્રસિદ્ધ કરે છે. અને એવું અન્ય ભાવમાં સંતુષ્ટપણું એ જ મિથ્યાત્વનો રસ છે. એ મિથ્યાત્વનો રસ છે. આમ છે. નહિતર દ્રવ્યલિંગી અંગ પૂર્વ ભણે અને પંચ મહાવ્રત અને અઠ્યાવીશ મૂળગુણ ચોખ્ખા પાળે એને બીજું શું દૂષણ થાય ? કે એને સંતોષ આવે છે એ એનું દૂષણ છે. આમ કરું છું, આટલું કરું છું, અન્ય ભાવમાં પોતાના કર્તૃત્વને એ દબ કરે છે. જે આત્માના આનંદના પરિણામ છે એ તો નથી પણ અન્ય ભાવમાં એ કર્તૃત્વને દબ કરે છે. અને શાતાની શાંતિ, કષાયની મંદતાની શાંતિ ત્યાં ઘણી છે. એકદમ કષાય મંદ થાય, ઘણો જ મંદ થાય ત્યારે એને શાતાની શાંતિ આવ્યા વિના (રહેતી નથી). શાતા પ્રકૃતિની એ શાંતિ છે. પુદ્ગલની (છે), એની શાંતિ એને વેદાય છે અને એમાં એ ભૂલ ખાય જાય છે. આમ છે.

મુમુક્ષુ :- આત્માની શાંતિ જરાય નથી.

પૂજ્ય ભાઈશ્રી :- એ આત્માને સમ્યગ્દર્શન પ્રાપ્ત કરવાની યોગ્યતામાં રોકનારું પ્રબળ સાધન છે, પ્રબળ કારણ છે. આવો બધો માર્ગદર્શનનો વિષય સત્પુરુષો સ્થાપતા ગયા છે.

૨૫૪ના પત્રાંકમાં 'શ્રીમદ્જી' એ આ વિષય ઉપાડ્યો છે કે મુમુક્ષુજીવને યોગ્યતામાં રોકનારા ત્રણ કારણો મુખ્યપણે અમે જોઈએ છીએ. એ ત્રણ કારણમાં પદાર્થનો અનિર્ણય છે. સત્પુરુષ પ્રત્યેના વિનયનું ઓછાપણું છે, અલ્પતા છે. પરમદૈન્યત્વની ઓછાઇ. એમના શબ્દમાં એ છે. પરમદૈન્યત્વનો અર્થ પોતે કર્યો છે પરમ વિનયનું ઓછાપણું છે. અને ત્રીજું એને ચાલતા પરિણમનમાં સંતોષ આવે છે. એટલે કે જે એને મુમુક્ષુને સામાન્ય રીતે કષાય મંદ રહે છે એમાં એને શાતા રહે છે. એ શાતામાં એને મીઠાશ લાગે છે. 'શ્રીમદ્જી'એ એને એમ કહ્યું છે કે લૌકિક સુખની એને અલ્પ પણ

સુખેચ્છા રહી છે. લૌકિક સુખની અલ્પ પણ સુખેચ્છા એટલે કે ભૌતિક સુખમાં સુખનો થોડો પણ અભિપ્રાય રહેવો એ એની યોગ્યતાને રોકનારું કારણ છે. એ શાતામાં રોકાય જશે. અનુકૂળતામાં એ રોકાય જશે, કષાયની મંદતાની શાતામાં એ રોકાય જશે. એ એની યોગ્યતાને રોકનારું કારણ છે. એથી એની યોગ્યતા રોકાય જાય છે. એમાં અતીન્દ્રિય આનંદની તાલાવેલી ન રહી એમ કહે છે. એ તાલાવેલીથી વિરુદ્ધ ભાવ થઈ ગયો. ક્યાં આનંદની તાલાવેલી અને ક્યાં એને આ ઠીક છે એમ લાગવું, બે વાતને પરસ્પર વિરુદ્ધતા છે એમ કહે છે.

મુમુક્ષુ :- એ તો રોકાઈને પાછો પડી જવાનો.

પૂજ્ય ભાઈશ્રી :- એ તો નીચે ઉતર્યો. ખલાસ. પગથિયું ચૂક્યો. એ પાછો જ પડવાનો છે. એના પરિણામ નીચે ગયા વિના રહે નહિ.

'બીજે ક્યાંય રસ પડે નહિ.' મીઠાશ લાગે નહિ અને એને રસ આવે નહિ, એની મહત્તા આવે નહિ, એની ગણતરી આવે નહિ. 'જગતના પદાર્થોનો રસ ફીકો લાગે, સંસારના રાગનો રસ ઊડી જાય.' જે કાંઈ સંગ-પ્રસંગો ઉદયમાન છે એમાં એને ક્યાંય રસ ન આવે પણ નિરસતા થઈ જાય. પોતાનું પ્રયોજન એને ક્યાંય ભાસતું નથી. પોતાનું પ્રયોજન નથી ભાસતું. એનું પ્રયોજન તો મોક્ષ છે. અહીંયાં ક્યાંય એને પ્રયોજન લાગતું નથી. જીવનો એવો સ્વભાવ છે કે એને પ્રયોજન હોય ત્યાં જ એને રસ આવે, વગર પ્રયોજનમાં એને રસ આવે નહિ.

રસ્તામાં જાય અને કાંઈક કુતૂહલ થાય તો એને ખબર પડે કે આમાં કાંઈ આપણા પ્રયોજનની વાત છે નહિ. ચાલો આગળ. રસ્તામાં ચાલતા ચાલતા મોટું ટોળું જોવે. શું છે ? ભાઈ ! આટલા બધા માણસ કેમ ભેગા થયા ? તો કહે, એક માણસ લાકડીઓ વહેંચે છે. જુદી જુદી જાતની લાવ્યો છે. એમાં આપણે ક્યાં લાકડીની જરૂર છે. માંડે ચાલવા. કે ઊભો રહે ? નકામી ચીજનો ખ્યાલ આવે એટલે એને રસ આવે નહિ. એમ એને જ્યારે મોક્ષનું નિદાન છે, મોક્ષનું પ્રયોજન છે ત્યારે

એને સંસારનું પ્રયોજન નથી. સીધી વાત છે. આમાં પોલ ચાલે એવું નથી.

જે સંસારિક પ્રસંગમાં ઊભો છે ત્યાં એને રસ આવે છે કે નથી આવતો ? આ સીધી વાત છે. મેળવણી તો કરી શકે એમ છે કે નહિ ? રસ આવે છે તો મોક્ષાર્થી નથી. સીધું લાગુ પડે એવી વાત છે. ગડબડ ચાલે એવું નથી. એમાં કાંઈ બીજા વધારે સારુ ગણે એટલે અહીંયાં એમ થઈ જાય છે એવું છે નહિ. બીજા માને કે ભાઈ બહુ આગળ વધ્યા છે, બહુ આગળ વધ્યા છે. પણ આમાં એ ચાલે એવું નથી. કેવળજ્ઞાનમાં કોઈની શરમ પહોંચે એવું નથી. કેવળજ્ઞાનમાં તો વસ્તુનું સ્વરૂપ જેમ છે તેમ જણાશે. ડીઝી ટુ ડીઝી વાત છે. એમાં કોઈની સિક્કારીશ કામ આવે એવું નથી કે ઘણા વખતથી 'સોનગઢ' જઈએ છીએ માટે કાંઈક તો અમારા માર્ક વધારે મૂકો. એ વાત ચાલે એવું નથી. આ તો આપણા ઉપર લેવા માટે 'સોનગઢ'ની વાત લીધી. આપણે આપણા ઉપર લેવું ને. બીજી રીતે એની શું કરવા વાત કરવી ?

'અહો ! જેના આટલા આટલા વખાણ થાય છે એ આત્મા અનંતાનંત ગુણોનો પુંજ પ્રભુ છે કોણ ? એમ આશ્ચર્ય થાય, એને લગની લાગે, એની ધૂન ચડે એને આત્મા મળે જ, ન મળે એમ બને જ નહીં.' Guaranteed વાત છે. મળશે કે નહિ મળે, એના ભાગ્યમાં હશે તો મળશે અને નહિતર નહિ મળે, કમબદ્ધમાં હશે તો મળશે. નહિતર મળે. કાળલબ્ધિ પાકી હશે તો મળશે અને નહિતર નહિ મળે. કાંઈ વાત નથી. એની કાળલબ્ધિ પાકી છે અને એનો કમ પણ આવી ગયો છે અને એનું ભાગ્ય, ખરેખર એનું ભાગ્ય જ ખૂલ્યું છે એમ છે. કેમકે એનો પુરુષાર્થ જાગૃત થઈ ગયો છે.

'જેના આટલા આટલા વખાણ...' એટલે પ્રશંસા, ગુણમહિમા સર્વજ્ઞની વાણી કરે છે, જે પરમાત્મતત્ત્વની પ્રશંસા, ગુણપ્રશંસા સર્વજ્ઞની વાણી કરે છે, સંતોની વાણી કરે છે, મહાત્માઓની વાણી કરે છે એવો આત્મા તે છે કોણ ? એનું એને કુતૂહલ જાગવું જોઈએ. શું

કહે છે ? 'એ આત્મા અનંતાનંત ગુણોનો પુંજ પ્રભુ છે કોણ ?' અનંત ગુણ એ પણ અલૌકિક ગુણ. લૌકિક ગુણમાં લોકોને મહત્તા આવે છે. ક્રોધ કરે એની સામે ક્ષમાનો મંદ કષાયનો વિકલ્પ રાખે તો લોકોને એમ થાય કે આહા..હા..! જુઓ તો ખરા ! આટલો ક્રોધ કર્યો પણ જવાબ દીધો નહિ.

મુમુક્ષુ :- માર્યા બે ત્રણ તમાચા. તોપણ બોલ્યો નહિ. બહુ શાંત.

પૂજ્ય ભાઈશ્રી :- બોલ્યો નહિ. ભાઈ ! એ તો હજી લૌકિક ગુણ છે. જેને પરમાર્થના પ્રકરણમાં દોષ ગણવામાં આવે છે. એવો આ ગુણ છે. એનો ગુણ કેવો ? એવા લોકોત્તર અનંત ગુણોનો પુંજ છે. એને ઓળખવાની, એને અનુભવ કરવાની લગની લાગે, ધૂન ચડે. ધૂન ચડે એમાં જોર લેવું છે. બીજો વિષય નહિ. આત્મપ્રાપ્તિ સિવાય જેને બીજો વિષય નથી રહેતો પરિણામમાં. એકવાર તો એ પરિસ્થિતિ આવ્યા વિના કોઈને પ્રાપ્તિ થાય છે એવું આ જગતમાં બનતું નથી. આ એના Process ના પરિણામ છે, મેળવણી કરવા માટે.

'એની લગની લાગે, એની ધૂન ચડે એને આત્મા મળે જ,...' મળે. હવે આ શુભભાવ છે કે શું છે ? ધૂન અને લગની. ઠીક ! ભાઈ ! એકલો શુભભાવ એમાં નથી. એમાં ધ્યેય જ્ઞાનનું લક્ષ છે એની ઉપર. એ જ્ઞાનના પરિણામ છે. સન્મુખ થયેલું જ્ઞાન હોય તો એમાં જ્ઞાન એની સન્મુખ થયું છે એમાં લક્ષના પરિણામ છે. એને શુભાશુભમાં ખતવાય નહિ. ચારિત્રગુણના પર્યાયને તમે શુભાશુભમાં ખતવી શકો. જ્ઞાનને શેમાં ખતવશો તમે ? એમાં એને શુભ અને અશુભનો ભેદ પડતો નથી.

જેમ શ્રદ્ધાનમાં પ્રત્યક્ષ-પરોક્ષનો ભેદ પડતો નથી, જ્ઞાનમાં જ પડે છે. એમ શુભાશુભનો ભેદ ચારિત્રના પરિણમનમાં પડે છે, જ્ઞાનના પરિણમનમાં નહિ. રચિના પરિણમનમાં નહિ, પુરુષાર્થના પરિણમનમાં નહિ. એ ધૂન ચડે છે એમાં એનો પુરુષાર્થ કામ કરે છે. પુરુષાર્થ કરીને સમ્યગ્દર્શનની પ્રાપ્તિ થઈ છે. પછી એ શુભભાવનો

પુરુષાર્થ નથી પણ એ આત્મપ્રાપ્તિના પુરુષાર્થમાં આત્મા પ્રાપ્ત થાય છે. શુભભાવના પુરુષાર્થમાં શુભભાવની પ્રાપ્તિ છે અને આત્મિક પુરુષાર્થમાં આત્માની પ્રાપ્તિ છે. જેને સમ્યગ્દર્શનમાં આત્મા પ્રાપ્ત થયો એને આત્મિક પુરુષાર્થ છે કે એને શુભભાવનો પુરુષાર્થ છે ? કે એને આત્મિક પુરુષાર્થ છે.

મુમુક્ષુ :- જ્ઞાનનું બળ વધે છે.

પૂજ્ય ભાઈશ્રી :- જ્ઞાનબળ વધે છે ત્યાં. જ્ઞાનબળ કહો કે જ્ઞાન સહિતનો પુરુષાર્થ કહો. બળ એટલે પુરુષાર્થ.

જુઓ ! Guaranteed વાત (કરી છે). 'ન મળે એમ બને જ નહીં.' ત્રણ કાળમાં બને નહિ એમ કહે છે. ભૂતકાળના અનંતા જીવોને આમ જ સફળતા મળી છે કે જેમાં એને નિષ્ફળતા મળી નથી. ભવિષ્યમાં અનંતાને આમ જ (થશે), અત્યારે પણ જેને કરવું હોય એને આમ જ છે.

જુઓ ! સિદ્ધાંત લે છે હવે, કે 'જેટલું કારણ આપે એટલું કાર્ય આવે.' ગોળ નાખે એટલું ગળ્યું થાય. આ તો કહે છે કે અમે તો તત્ત્વનો અભ્યાસ કરીએ છીએ એ પુરુષાર્થ કરીએ છીએ. તત્ત્વજ્ઞાનનો અમે ઘણા વર્ષોથી અભ્યાસ કરીએ છીએ, ઘણા વખતથી અમે પુરુષાર્થ તો કરીએ છીએ અમને કેમ અનુભવ થતો

નથી ? કહે છે કે તારો પુરુષાર્થ શુભનો છે કે આત્માનો છે ? આટલી વાત છે. ગોળ નાખ્યો નથી અને તું એમ પૂછે છે કે કેમ ગળ્યું થયું નહિ ? નહિ થાય. ગોળ નાખે ને ગળ્યું થયા વિના રહે નહિ.

'જેટલું કારણ આપે એટલું કાર્ય આવે.' નિયમબદ્ધ વાત છે. 'કારણ આપ્યા વિના કાર્ય આવતું નથી.' પરિપક્વ અવસ્થા છે. સમ્યગ્દર્શન છે એ આત્માના અનુભવની પાકીને આવેલી અવસ્થા છે. અકાળે આવેલી નથી પણ સ્વકાળે પાકીને આવેલી એ અવસ્થા છે. એનું કારણ બરાબર ઉપસ્થિત થયું છે અને કાર્ય આવ્યું છે. અંદરમાં એનું કારણ બરાબર ઉપસ્થિત થયું છે અને એ કાર્યરૂપ આવ્યું છે. કોઈ એમનેમ અદ્વરથી આવ્યું નથી.

જો કાર્ય આવતું નથી તો એ 'કારણની કચાશના લઈને...' જ્યાં સુધી સમ્યગ્દર્શન થતું નથી ત્યાં સુધી એ કારણમાં કાં તો કચાશ છે તો કાર્ય ઉત્પન્ન નથી. જો કચાશ રહે તોપણ કાર્ય ઉત્પન્ન ન થાય તો વિપર્યાસ રહે અને કાર્ય ઉત્પન્ન થાય એ વાતને તો મેળ ખાતો નથી. થોડો કચાશ ને વિપર્યાસ લીધો. કચાશ શું છે અને વિપર્યાસ શું છે ? આ જરા વિચારવા જેવો વિષય છે. વિશેષ લઈશું...

દષ્ટિની વાત મુખ્ય રાખીને બધી ખતવણી કરવી જોઈએ. આ તરફ (—અંતરમાં) દષ્ટિ થતાં જે જ્ઞાન થયું... તે (જ્ઞાન) વસ્તુને જેવી છે તેવી જ જાણી લ્યે છે. આ દષ્ટિ વિના તો કોઈ વાતમાં વધારે ખેંચાઈ જાય છે અથવા કોઈ વાતને ઢીલી કરી દે છે. પરંતુ દષ્ટિ થવાથી જ્ઞાન (મધ્યસ્થ થઈ જાય છે, માટે) જેની જેટલી-જેટલી મર્યાદા છે તે અનુસાર જ જાણે છે. (સ્વરૂપદષ્ટિમાં સર્વસ્વરૂપથી સ્વરૂપની ઉપાદેયતા થઈ જાય છે. અને પરિણમનનું એવું વલણ થઈ જવાથી જ્ઞાનમાં અવિવેક ઉત્પન્ન નથી થતો જેથી જ્ઞાન અયથાર્થરૂપથી હીનાધિક વજન નથી દેતા. એવી સમ્યક્ મર્યાદાપૂર્વક જ્ઞાનની પ્રવૃત્તિ રહે છે.

(દ્રવ્યદષ્ટિ પ્રકાશ બોલ નં. ૩૩૮)



દ્રવ્યદષ્ટિ પ્રકાશ ગ્રંથમાંથી દષ્ટિનું પરિણમન અને દષ્ટિના વિષય ઉપરના પૂજ્ય શ્રી સોગાનીજીના વચનામૃતો

(પોતાના સુખ માટે) આખા જગતમાં બસ... 'હું જ એક વસ્તુ છું અને કોઈ બીજી વસ્તુ છે જ નહિ.' અરે ! બીજી કોઈ વસ્તુ છે કે નહિ, એવો વિકલ્પ પણ શા માટે ? (૫૭૮)



પરિણામ માત્ર વ્યવહાર છે. પરિણામની દષ્ટિથી દીનતા આવે છે. પર્યાયમાં રોકાવાથી એકાંત દુઃખ થાય છે. પરિણામ ઉત્પાદ-વ્યય સ્વરૂપ છે. 'હું' તો અપરિણામી છું, જેમાં ઉત્પાદ-વ્યય નથી; નિગોદથી લઈને સિદ્ધ સુધી એવો ને એવો જ છું. પરિણામમાં પ્રસરવાથી પરિણામ જેટલો થઈ જાય. (ક્ષણિકપરિણામ જેટલો જ પોતાનું જીવન (અસ્તિત્વ) પ્રહણ કરવાથી - એમ મિથ્યાત્વના ફલસ્વરૂપ - નિગોદનું ક્ષણિક જીવન પ્રાપ્ત થાય છે.) (૫૮૩)



'હું' તો વિકલ્પમાત્રથી અને પરિણામ માત્રથી રહિત છું. (૫૮૫)



અરીસામાં સમય-સમયના (પ્રતિબિંબ જેવા) આકાર થાય છે, તોપણ અરીસામાં દળ જેમનું તેમ રહે છે. તેવી રીતે, 'સ્વભાવ' અરીસાના દળ જેવો છે; તે સ્વયંની સાથે તાદાત્મ્ય છે, આકારની સાથે નહિ. ત્રિકાળીમાં વર્તમાન પરિણામનો અભાવ છે. (૫૮૯)



'સ્વભાવ' સાવધાન સ્વરૂપ છે. પર્યાયમાં સાવધાની થવાથી સ્વભાવ પકડવામાં આવતો નથી. (૫૯૧)



'હું ત્રિકાળી અપરિણામી છું,' પરિણામ માત્ર ગૌણ છે, વર્તમાનમાં આવો નિશ્ચય હોવો જોઈએ. ધ્રુવસ્વભાવ સદા પ્રસિદ્ધ છે; ઉત્પાદ-વ્યયના કાળમાં જુદો પ્રગટ છે. (સ્વભાવની) દષ્ટિ પ્રતિસમય પર્યાયને ગૌણ કરે છે. (૫૯૪)



ત્રિકાળીમાં વિકાર-અવિકાર કાંઈ નથી. (તે તો જેવું છે તેવું છે.) (૬૦૬)



'વર્તમાનમાં જ અક્રિય-અપરિણામી છું,' અર્થાત્ કોઈ ક્રિયા કરવાનો અભિપ્રાય નથી. કાંઈ કરું... કરુંમાં સ્વયં પરિણામતા પરિણામને કરવાનો અભિપ્રાય રહે છે. (જે મિથ્યા છે.) (૬૦૮)



એક બાજુ ત્રિકાળીનું છાબડું (પલ્લું), અને બીજી બાજુ ક્ષણિકનું છાબડું (પલ્લું); - જેમ એક બાજુ માલ, અને બીજી બાજુ બારદાન; મહત્તા માલની છે, બારદાનની નહિ. (૬૧૭)



'હું પરિણામથી શૂન્ય છું' - એવું જોર આવવું જોઈએ. (૬૨૫)



'મારી' ભૂમિ વર્તમાનમાં એટલી નિષ્કંપ અને નક્કર (ઠોસ) છે કે જેથી 'હું' વર્તમાનમાં જ નિર્ભય છું.

નિરાવલંબી છું, પરિપૂર્ણ છું, નિષ્ક્રિય છું, સુખસ્વરૂપ છું, કૃતકૃત્ય છું, ત્રિકાળ એકરૂપ છું, અચળ છું. (૬૨૭)



એક પલ્લામાં (છાબડામાં) આત્મા, અને બીજા પલ્લામાં (છાબડામાં) ત્રણકાળ, ત્રણલોક; તોપણ આત્માવાળું પલ્લડું (ભારથી) બેસી જાય છે, અને બીજું પલ્લું ઉલળી જાય છે. (૬૨૮)



‘હું તો અત્યારે સિદ્ધ છું,’ ચૌદમું ગુણસ્થાન થશે અને પછી સિદ્ધાલયમાં જવાનું થશે, ક્ષેત્રાંતર વગેરે થશે; પરંતુ તે બધાં કાર્યો પર્યાયમાં થશે. પર્યાયનાં કાર્યો પર્યાયમાં થાય છે, ‘મારા’માં નહિ. ‘હું’ તો અત્યારે જ સિદ્ધાલયમાં બેઠો છું ! ક્યારેય ક્યાંય આવ્યો પણ નથી, ગયો પણ નથી. (૬૩૭)



આત્મા કઈ રીતે પ્રાપ્ત થાય :-

પોતાના ત્રિકાળી અસ્તિત્વમાં અહંપણું થવાથી પર્યાયબુદ્ધિ છૂટી જાય છે. (૨૫)



પ્રશ્ન :- શરૂઆતવાળાએ અનુભવનો પ્રયત્ન કઈ રીતે કરવો ?

ઉત્તર :- હું પરિણામમાત્ર નથી, ત્રિકાળી ધ્રુવપણામાં અહંપણું સ્થાપી દેવું તે જ ઉપાય છે. (૭૦)



એક જ માસ્ટર કી (Master key) છે, બધી વાતોમાં, બધા શાસ્ત્રોમાં એક જ સાર છે. ત્રિકાલીપણામાં અહંપણું જોડી દેવાનું છે. (૮૦)



(‘આત્મપ્રાપ્તિ કેમ થાય’ આ વિષયમાં જિજ્ઞાસાપૂર્વક પૂછેલા પ્રશ્નનો આ વિસ્તૃત ઉત્તર છે :-)

રુચિમાં ખરેખર પોતાની જરૂર લાગે, ત્યારે પોતાની વસ્તુની પ્રાપ્તિ થયા વિના રહે નહિ. ચોવીસ કલાક ચિંતનમાં-વગરચિંતનમાં એક આ જ (સ્વરૂપનું ઘોલન) ચાલતું રહે. જે વિષયની રુચિ હોય છે, તે વિષય, સેંકડો બાહ્યકાર્ય કરવા છતાં પણ, ચાલુ જ રહે છે. બહારનો ઉપયોગ ઉપર ઉપર ચાલે છે - તેમાં જાગૃતિ હોતી નથી. જે વિષયની રુચિ હોય છે તેમાં જ જાગૃતિ રહે છે. સેંકડો કાર્ય કરતા રહેવા છતાં પણ, તે બધાની ગૌણતા જ રહ્યા કરે છે અને રુચિનો વિષય જ મુખ્ય રહે છે.

વિકલ્પાત્મક વિચારમાં પણ, શરીરાકાર ચૈતન્યમૂર્તિને ટાંકી દો. ‘હું તો આ જ છું.’ સુખ-દુઃખની જે કાંઈ પર્યાય થાય તેની ઉપેક્ષા રાખો. ‘હું તો આ જ છું.’ વિચાર ચાલે, તેની પણ ગૌણતા રાખો. ‘હું તો એવો ને એવો ચૈતન્યમૂર્તિ છું.’ બસ આ જ દઢતા કરતા રહો.

સાંભળવું, શાસ્ત્ર વાંચવું વગેરે બધાની ગૌણતા થવી જોઈએ. એકાંતનો વધુ અભ્યાસ રહેવો જોઈએ. (જેથી સ્વરૂપ-ઘોલન વધે.)

આ (સમ્યક્ત્વ) પ્રાપ્ત ન થયું તો જીવ નિગોદમાં ચાલ્યો જશે. એમ નિગોદના ભયથી પોતાનું કાર્ય કરવા ચાલે, (જે યથાર્થ નથી.) પરંતુ (અભિપ્રાયમાં) નિગોદની અવસ્થા હો અથવા સિદ્ધની, મારો કાંઈ બગાડ-સુધાર નથી (હું અવસ્થારૂપ નથી) એવી હું અચલિત વસ્તુ છું - એવી શ્રદ્ધા જામી જવી જોઈએ. પર્યાય ગમે તેવી હો, તેની ઉપેક્ષા જ રહેવી જોઈએ.

પરદ્રવ્યની સાથે તો કાંઈ સંબંધ જ નથી. એટલો આ વાતનો તો પક્ષ હોવો જોઈએ - પછી વસ્તુ (ત્રિકાળી

ધ્રુવ) અને પરિણામ (ઉત્પાદ-વ્યય) એ બે વચ્ચેના વિચારમાં જ બધો સમય લગાવી દેવો. ચોવીસે કલાક બસ આ જ (સ્વરૂપનું ઘૂંટણ) ચાલવું જોઈએ. પ્રવૃત્તિભાવને ગૌણ કરીને આ જ એકની મુખ્યતા હોવી જોઈએ. આ જ પ્રયાસ નિરંતર ચાલવો જોઈએ. (૨૫૦)



પ્રશ્ન :- આત્મા તો દેખાતો નથી તો પ્રત્યક્ષ કેમ થાય ?

ઉત્તર :- પરિણામ તો દેખાય છે ને ! તો પરિણામ જેમાંથી આવે છે... એ (અનંત પ્રત્યક્ષ) ચીજનું પહેલાં અનુમાન કરવામાં આવે છે, પછી (વેદનથી) પ્રત્યક્ષ કરવું. (૫૦૬)



“શ્રી નિહાલચંદ્રજી સોગાની” દ્વારા સાધર્મીને લખેલ આધ્યાત્મિક પત્ર

(૩૨)

કલકત્તા

૧૫-૧૧-૬૨

ૐ

શ્રી સેકીજી સાહેબ, સાદર જયજિનેન્દ્ર.

આપનો તા. ૧૨-૧૧-૬૨નો પત્ર મળ્યો. અન્ય લોકોના ચારિત્રનિર્માણ સંબંધી આપનો દષ્ટિકોણ ખ્યાલમાં રાખીને નીચે સ્પષ્ટીકરણ લખ્યું છે :-

૧. પ્રથમ તો હું કોણ છું અને હું શું કરી શકું છું - આનો યથાર્થ ખુલાસો થતાં કાર્યની યથાર્થ સીમા બંધાઈ શકે. હું આત્મા છું, પરિણામ કરવાં અને તે જ પરિણામોને ભોગવવાં એ જ માત્ર આત્માની ક્રિયા છે; આનાથી વિપરીત પોતાનાં જડ શરીરાદિનાં તેમ જ અન્ય આત્માનાં પરિણામો હું આત્મા કરી શકતો નથી, કારણકે જડનાં પરિણામોનો કર્તા જડ દ્રવ્ય છે અને અન્ય આત્માનાં પરિણામોનો કર્તા તે આત્મદ્રવ્ય છે. (ઉત્પાદ-વ્યય-ધ્રીવ્યયુક્તં સત્)

૨. ઉક્ત પ્રકારનો યથાર્થ નિર્ણય થયા પછી પરપરિણામના કિંચિત્ પણ કર્તાપણાનો અભિપ્રાય તૂટી જાય છે. હું પરનું કાંઈ પણ કરી જ શકતો નથી તો પછી પરાશ્રિત પરિણામ શા માટે કરું કે જે સ્વયં આકુળતામય જ છે. આ પરિણામોને સ્વ-આશ્રિત કરું તો શુદ્ધ જ્ઞાન-આનંદ અને શાંતિમય પરિણામો થશે તેમ એનો ભોગવતો રહેશે કે જે ઇચ્છનીય છે.

૩. ‘સ્વ’માં અર્થાત્ જ્ઞાન-આનંદ આદિ ગુણોનો ભંડાર એવા આત્મામાં પરિણામોને ફેલાવતાં જ સાધકપણું

અને મુનિપણું વગેરે ક્રમશઃ આવે છે. પરિણામોના આ પ્રકારના ફેલાવામાં જ યથાર્થ જ્ઞાન-સુખાદિનો અનુભવ ઉત્પન્ન થવા લાગે છે, જેની પ્રત્યક્ષતાથી પરાશ્રિત આકુળતામય પરિણામો પ્રત્યક્ષ વિષરૂપ માલૂમ પડવા લાગે છે કે જે સમ્યગ્દષ્ટિ સાધક અને મુનિઓને એક સમય માત્ર પણ રુચતાં નથી.

૪. ઉક્ત માન્યતા તેમ જ તદ્દરૂપ અનુભવ થતાં અનાદિથી ચાલ્યો આવતો દષ્ટિનો મોહ તૂટી જાય છે. દષ્ટિએ જે સ્વ-અખંડ સ્વ-આત્માને લક્ષ્ય બનાવ્યું તેમાં એકી સાથે પરિપૂર્ણ પરિણામનો ફેલાવો થતો નથી, ત્યાં સુધી પરિણામનો કંઈક અંશ અખંડની સાથે સુખરૂપે પરિણમે છે અને તે જ પરિણામોનો કંઈક અંશ ઉદયની સાથે પરાશ્રિત દુઃખરૂપે પરિણમે છે. સાધક અને મુનિને આ પ્રકારે પરાશ્રિત પરિણમેલો રાગ-અંશ ઉપદેશાદિમાં કારણ થાય છે. આ રાગ-અંશ એ ચારિત્રમોહ છે, આકુળતામય છે અને તે પ્રત્યેક સમયે હેય છે, પ્રત્યક્ષ દુઃખરૂપ છે કે જે મુનિઓને બિલકુલ રુચતો નથી અને તેમાં એમને રસ આવતો નથી. પુરુષાર્થની નિર્બળતાથી અખંડ આત્માની પૂરેપૂરી પકડ ચારિત્ર પરિણામમાં ન હોવાથી એવો રાગ-અંશ હોય છે, જેનો નિષેધ પ્રત્યેક સમયે તેમની દષ્ટિ કર્યા કરે છે. એક સમય માટે પણ ચારિત્રમોહ સ્વરૂપી રાગ-અંશને તેઓ પોતાનું કર્તવ્ય સમજતા નથી, કે જે પ્રત્યક્ષ દુઃખરૂપ છે. આથી વારંવાર સ્વમાં સ્થિર થતાં થતાં રાગ-અંશને તોડતાં તોડતાં તેઓ શુદ્ધ સિદ્ધરૂપ થઈ જાય છે.

૫. મુનિઓના રાગ-અંશ નિમિત્તક ઉપદેશમાં ઉક્ત આશયનો સંકેત હોય છે. ભલી હોનહારવાળા જીવને તે નિમિત્તરૂપ થાય છે અને તેઓ સ્વયં પણ ઉપદેશાદિ તરફથી લક્ષ્ય હઠાવીને, ઉપદેશાદિને મુનિઓનું કર્તવ્ય સમજતા નથી, પરંતુ તેને તેમની અસ્થિરતાનો દોષ સમજીને, તેના પરથી વૃત્તિ હઠાવી લઈને, સ્વજ્ઞાનની ખાણમાં પ્રવેશ કરવા લાગે છે. અરિહંતોને ઉપદેશમાં નિમિત્ત એમનો રાગ નથી પરંતુ કંપનની અસ્થિરતા છે.

૬. રાગ તેમ જ વીતરાગતા એ બંને કર્તવ્ય બની શકતાં નથી, કારણકે બંને ભાવો પરસ્પર વિરુદ્ધ છે; તેથી અન્યના ચારિત્ર-નિર્માણના કર્તવ્યમાં વીતરાગી કર્તવ્યનો સહજ જ અભાવ છે. સાથે જ અન્યના પરિણામનો કોઈ અન્ય કર્તા થઈ શકતો જ નથી; ભલે એવી માન્યતા કરીને તે સ્વયં દુઃખી થતો રહે.

૭. એકવાર પ્રથમ સમ્યક્ત્વ તો અધિગમજ-ઉપદેશના નિમિત્તથી જ થાય છે, બીજા ભવમાં તે સંસ્કારોના નિમિત્તે ઉપદેશ વગર જે સમ્યક્ત્વ પ્રાપ્ત થાય તેને નૈસર્ગિક કહે છે; પરંતુ સ્વયં પરાશ્રિત દષ્ટિ હઠાવીને, સ્વઆશ્રિત પરિણામ કરે તો ઉપદેશને નિમિત્ત કહેવામાં આવે છે, કર્તા નહીં. જેની યોગ્યતા હોય તેને નિમિત્ત-નૈમિત્તિક સંબંધનો સહજ જ યોગ બને છે, એવો નિમિત્ત-નૈમિત્તિક સંબંધ અનાદિથી ચાલ્યો આવે છે અને તે ચાલતો રહેશે.

આશા છે કે, મુનિઓના ઉપદેશ સંબંધી વિષયમાં ઉપરોક્ત સ્પષ્ટીકરણથી મારો દષ્ટિકોણ આપના લક્ષ્યમાં આવશે. દષ્ટિ દોષ હઠે, તે પછી મુનિઓને ઉપદેશનો રાગ તેમની અસ્થિરતાનો દોષ છે, તે કર્તવ્ય નથી અને આ દોષને સ્થિરતાનો પ્રયત્ન કરતાં કરતાં તે હઠાવતા જાય છે, કર્તવ્ય સમજીને રાખવા નથી ઇચ્છતા.

આપનો પ્રોગ્રામ લખશો અને પત્ર લખશો.

શુભૈષી

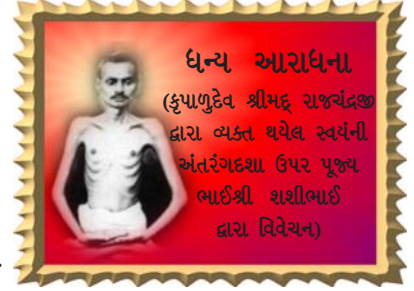
નિહાલચંદ્ર સોગાની

૨૩૯

મુંબઈ, ચૈત્ર વદ ૭, ગુરુ, ૧૯૪૭

‘જોકે ઉપાધિસંયુક્ત કાળ ઘણો જાય છે, ઇશ્વરેચ્છા પ્રમાણે વર્તવું શ્રેયસ્કર છે અને યોગ્ય છે, એટલે જેમ ચાલે છે તેમ ઉપાધિ હો તોભલે, ન હો તોપણ ભલે, જે હોય તે સમાન જ છે.’

વર્તમાનમાં વ્યવસાય સંબંધિત અનેક પ્રકારના ઉપાધિસંયુક્ત કાર્યોમાં ઘણો સમય વ્યતીત થાય છે તે આત્મહિતના કાર્ય માટે અનુકૂળ ન હોવા છતાં પણ કુદરતી રીતે જે થયા કરે તે અનુસાર, અર્થાત્ પૂર્વકર્મના ઉદયને સમભાવે ભોગવવો તે પ્રકારે, વર્તવું શ્રેયસ્કર છે. જે કાંઈ નુકસાન થાય છે તે તો પોતાના અનાત્મભાવના કારણે થાય છે; બાહ્ય પ્રવૃત્તિના કારણથી નહિ. પરંતુ કૃપાળુદેવની જ્ઞાનદશા અને વીતરાગતામાં-ઉપાધિનો સદ્ભાવ કે અભાવ સમાન જ હોવાથી-ઉદયમાન પૂર્વકર્મની સમ્યક્ પ્રકારે નિર્જરા થાય છે, તેથી ઉદયની ચિંતા નહિ થતાં સમાધાન રહે છે. નમસ્કાર હો તેઓશ્રીની સાધનાને !



૨૪૪

મુંબઈ, વૈશાખ સુદ ૭, શુક્ર, ૧૯૪૭

‘કેટલોક નિવૃત્તિનો વખત મળ્યા કરે છે; પરબ્રહ્મવિચાર તો એમ ને એમ રહ્યા જ કરે છે; ક્યારેક તો તે માટે આનંદકિરણ બહુ સ્ફુરી નીળે છે, અને કંઈની કંઈ (અભેદ) વાત સમજાય છે; પણ કોઈને કહી શકાતી નથી; અમારી એ વેદના અથાગ છે.’

બાહ્યપ્રવૃત્તિ સિવાય કેટલોક વખત નિવૃત્તિનો અવારનવાર મળે છે. પરંતુ પ્રવૃત્તિ અને નિવૃત્તિનો અવારનવાર મળે છે. પરંતુ પ્રવૃત્તિ અને નિવૃત્તિના બન્ને સમયમાં આનંદમૂર્તિ પરબ્રહ્મપરમાત્માનું લક્ષ તો સહજપણે રહ્યા જ કરે છે. અને ક્યારેક તો આનંદમૂર્તિ આત્મામાં ઉપયોગ, વ્યાખ્યાપકભાવે એકાગ્ર થતાં નિર્વિકલ્પદશામાં આનંદના કિરણો ઉભરાઈ આવે છે, જ્ઞાનસ્વરૂપ/સ્વભાવમાં ઊંડે ઊંડે ચાલ્યું જાય છે અને અચિંત્ય સ્વભાવની કાંઈને કાંઈ ઊંડી વાત અનુભવ જ્ઞાનમાં સ્પષ્ટ થાય છે; તે અગમઅગોચર વસ્તુનો વિષય એટલો બધો સૂક્ષ્મ છે કે તેને ઝીલનાર કે સમજનાર કોઈ યોગ્ય મુમુક્ષુ નથી, તે એક અમારી વેદનાનો વિષય છે. જો કે એ વેદના ઓછી થાય તેવું એક પાત્ર કૃપાળુદેવની નજરમાં શ્રી સૌભાગ્યભાઈ છે; પરંતુ તેમનો વિયોગ રહે છે. તેમ છતાં શ્રી સૌભાગ્યભાઈ આત્મસ્વભાવના ઊંડાણ વિષે કાંઈ જિજ્ઞાસાથી પૂછે તો સારું, તેવી ભાવના વ્યક્ત કરી છે. આ રીતે પરમ સત્ ગુપ્ત રહેવાના કારણથી અફસોસ થાય છે અને તે વ્યક્ત થાય તો યોગ્યપાત્રની જિજ્ઞાસા નિમિત્તે જ વ્યક્ત થવું સંભવે છે, અન્યથા નહિ. એવી કુદરતી પ્રક્રિયા અંગેનો સંકેત પણ આ વચનામૃતમાં માલૂમ પડે છે. તે સંકેત એવો છે કે અનુભવી પુરુષોના અનુભવનું ઊંડાણ વ્યક્ત થવા માટે સામે કોઈ આત્મઉન્નતિની શ્રેણિમાં આવેલાં યોગ્ય પાત્રના નિમિત્તે જ વ્યક્ત થાય છે અને પરમ સત્નો પ્રકાશ થાય છે; ત્યારે એક પાત્ર જીવના નિમિત્તે બહાર આવેલું પરમ સત્ય અને રહસ્ય ભાવીના બીજા અનેક જીવોને પણ આત્મશ્રેયનું નિમિત્ત બને છે. અહીં પરમ કૃપાળુદેવના વચનગાંભીર્યના ઊંડાણનું દર્શન થાય છે.

પૂજ્ય બહેનશ્રીની તત્ત્વચર્ચા

પ્રશ્ન :- વચનામૃતમાં આવે છે કે સમ્યગ્દષ્ટિને રાગ રહે છે, પણ રાગનો રસ નીતરી જાય છે. તો તેનો આશય સમજાવશો.

સમાધાન :- સમ્યગ્દષ્ટિને અસ્થિરતાનો રાગ ઊભો છે, પણ રાગ ઉપર પ્રીતિ નથી. આ રાગ આદરણીય નથી, તે મારું સ્વરૂપ નથી. હું તો વીતરાગસ્વરૂપ છું, એવું જ્ઞાનીને ભાન હોવાથી રાગનો રસ નીતરી ગયો છે. એટલે કે તેને એકત્વબુદ્ધિ-સ્વામિત્વબુદ્ધિ તૂટી ગઈ છે, રાગથી અત્યંત જુદી પરિણતિ રહે છે. જ્ઞાનીને રાગ ઊભો છે તો પણ રાગનો રાગ નથી. રાગ રાખવા યોગ્ય નથી, રાગ મારું સ્વરૂપ નથી, એવી જ્ઞાયક દશા તેને ક્ષણે ક્ષણે વર્તે જ છે. તેને રાગનો રસ ઊતરી ગયો છે પણ અસ્થિરતાને લઈને તેમાં જોડાય છે, પરંતુ લૂખા ભાવે જોડાય છે. ભેદજ્ઞાનની પરિણતિ પ્રગટ થઈ હોવાથી ન્યારા ભાવે જોડાય છે. (સ્વાનુભૂતિદર્શન-૩૩૧)



પ્રશ્ન :- આત્મામાં સુખ ભર્યું પડ્યું છે તો તેનો નિર્ણય કરવાની રીત શું ?

સમાધાન :- આત્મામાં જ સુખ છે એમ આચાર્યદેવે ને ગુરુદેવે જીવનો સ્વભાવ બતાવીને અનેક યુક્તિ અને દલીલથી કહ્યું છે તે ઉપરાંત અમે સ્વાનુભૂતિ કરીને કહીએ છીએ કે આત્મામાં જ સુખ છે. ગુરુદેવે તો ઉપદેશમાં ઘણી ચોખવટ કરીને બધું સૂક્ષ્મ રીતે-અપૂર્વ રીતે સમજાવી દીધું છે. કોઈ જતો હોય તેને માર્ગ કોઈ બતાવે, પણ ચાલવાનું તો પોતાને જ છે, નિર્ણય પોતાને જ કરવાનો છે.

ગમે તે ભાવોમાં, ગમે તે રાગમાં, ગમે તે કાર્યોમાં સુખની કલ્પના કરનારો સુખ માને છે, પણ તે પોતે જ સુખસ્વભાવી છે, સહજ આનંદસ્વભાવી છે. તેને પોતા તરફ દષ્ટિ નથી, તેથી જ્યાં સુખ નથી ત્યાં સુખની કલ્પના કરે છે. કલ્પના કરીને સુખને વેદું છું, એમ

માની રહ્યો છે. જે પોતે સુખસ્વભાવી છે તે પરમાં સુખ માની રહ્યો છે; જડ નથી માનતું. સુખસ્વભાવ પોતાનો છે, છતાં જ્યાં ત્યાં આરોપ કરીને સુખની કલ્પના પોતે કર્યા કરે છે. પોતે સુખનો ભંડાર છે, છતાં બીજામાં સુખની કલ્પના કરે છે. દષ્ટિ ઊંધી છે તેથી બહાર સુખ માન્યું છે. અંદર સ્વતઃસિદ્ધ અનાદિ-અનંત સુખસ્વભાવ પોતાનો છે. જેમ જ્ઞાન પોતાનું છે, તેમ સુખસ્વભાવ સહજ સ્વરૂપે પોતાનો છે. છતાં જ્યાં ત્યાં કલ્પના કરીને શાંતિ અને સુખ માન્યું છે. આવું પોતે જ માની રહ્યો છે, પણ સુખ પોતામાં છે. ગુરુદેવ ઘણીવાર કહે છે કે મૃગને પોતાની નાભિમાં રહેલી કસ્તુરીની સુગંધ આવે છે છતાં તેને વિશ્વાસ નહિ હોવાથી તે ચારેકોર ગોતે છે. તેમ સુખસ્વભાવી પોતે સુખની કલ્પના જ્યાં ત્યાં બહારમાં કરી રહ્યો છે. સુખનો ભંડાર, સ્વતઃસિદ્ધ આનંદ વસ્તુ પોતે જ છે, તો પણ પોતે જ્યાં ત્યાં સુખ માની રહ્યો છે.



(સ્વાનુભૂતિદર્શન-૩૩૨)



પ્રશ્ન :- સુખ ક્યાંય દૂર નથી ?

સમાધાન :- પોતાના સહજ સ્વભાવમાં જ સુખ છે. વિકલ્પની જાળ અર્થાત્ વિભાવને છોડે, ત્યાંથી પાછો ફરે, ભેદજ્ઞાન કરે અને પોતે નિર્વિકલ્પ સ્વરૂપમાં જાય, તો સુખ-કે જે સહજસ્વભાવ છે તે સુખનો સાગર-પોતામાંથી પ્રગટ થાય તેમ છે. પણ બહાર કલ્પી રહ્યો છે. સુખ ક્યાંય દૂર નથી.

(સ્વાનુભૂતિદર્શન-૩૩૩)



ધન્ય ગુરુ ! ધન્ય શિષ્ય !!
પુરુષાર્થમૂર્તિ પૂજ્ય નિહાલચંદ્ર સોગાની વિષે
અધ્યાત્મયુગપુરુષ પૂજ્ય ગુરુદેવશ્રીના પ્રમોદપૂર્ણ હૃદયોદ્ગાર !

‘સોગાની’ કા પુસ્તક હૈ... ‘દ્રવ્યદષ્ટિ પ્રકાશ’ ! (ઉનમ્) બહુત શક્તિ થી. આત્મજ્ઞાન હુઆ થા. યહી... ઇસી ગાંવમ્...! પહલે સાધુ-બાવાકા બહુત પરિચય ક્રિયા થા. યમ, નિયમ, ધ્યાન... (સબ ક્રિયા થા). ફિર યહાં આયે (તો હમને) ઇતના કહા - ‘ભૈયા ! યે વિકલ્પ ઊઠતા હૈ ન ! રાગ ! ચાહે તો દયા, દાનકા હો ! યે સબ રાગસે અંદર પ્રભુ ભિન્ન હૈ !’ ઐસા કહા ઔર ધ્યાનમ્ યલે ગયે. યહાં રસોઈ હૈ ન રસોઈ ? (સમિતિ) ! સમિતિમ્ ગયે ઔર શામ સે સબેરે તક ધ્યાનમ્ બૈઠે ! અંદરમ્ ઘોલન કરતે... કરતે... કરતે... રાગસે ભિન્ન ચૈતન્યકા અનુભવ યહાં સમિતિમ્ હુઆ થા. બાદમ્ સારી જિંદગી બહુત અચ્છે સંસ્કાર લેકર સ્વર્ગમ્ યલે ગયે ! આહા...હા...! બહુત શક્તિ થી ! ‘દ્રવ્યદષ્ટિ પ્રકાશ’ હૈ ન ! ઉસમ્ બહુત હૈ ! ...વહાંસે નિકલકર બાદમ્ દૂસરે ભવમ્ કેવલજ્ઞાન પાકર મોક્ષ હો જાયેગા ! ...વહાં સ્વર્ગમ્ ભી આત્મામ્ ઠરતે હૈં. પરંતુ થોડા રાગ હૈ તો મનુષ્યભવ પાકર, કેવલજ્ઞાન પાકર, રાગકા નાશ હોકર મુક્તિ હોગી !!

(શ્રી ‘સમયસાર કળશ ટીકા’ કળશ-૨૧૬ના પ્રવચનમાંથી, સર્ળંગ પ્રવચન નં. ૨૪૧)

જન્મ :

ઈ. સ. ૧૯૧૨



વૈશાખ સુદ-૧૧

૧૦૨ મી જન્મજયંતિ પ્રસંગે પૂજ્ય શ્રી નિહાલચંદ્ર સોગાનીજીના ચરણોમાં
ભક્તિભાવ પૂર્વક વંદન

પૂજ્ય ગુરુદેવશ્રીના મહાપુરાણનું આ એક પાત્ર છે. સોનગઢની તીર્થભૂમિ-એ તીર્થભૂમિમાં સમ્યગ્દર્શનરૂપી સપૂત કોઈ નહોતો જાગ્યો, નહોતો પાક્યો, ત્યાં સુધી આગળ જે-જે ધર્માત્માઓ થયા એ સોનગઢ ભૂમિમાં નથી થયા, જુદી-જુદી ભૂમિમાં થયા છે. જ્યારે ગુરુદેવની જે સાધનાભૂમિ છે, એ સાધનાભૂમિમાં સાધનાનું એક નવું યશકલગી ઉમેરાણું અને એ ભૂમિ પણ ફલવંતી થઈ અને એક ફળ પાક્યું - એ સોગાનીજી છે. પૂજ્ય સોગાનીજીનું બહુમાન એ માત્ર એક વ્યક્તિનું બહુમાન નથી, એ સમ્યગ્દર્શનનું બહુમાન છે અને જે-જે સર્વ સમ્યગ્દર્શન ધારક મહાત્માઓ છે, ધર્માત્માઓ છે તે અનંતા - ત્રણે કાળના ધર્માત્માઓનું બહુમાન, એમાં સન્માન છે.
(-પૂજ્ય ભાઈશ્રી શશીભાઈ)

શાસન શિરોમણિ, નિશ્ચયરત્નત્રયાત્મક મોક્ષમાર્ગ પ્રકાશક, ભાવિના ભગવાન, જિનેન્દ્ર
લઘુનંદન વહાલા કહાનગુરુની ૧૨૪મી જન્મજયંતીના મંગલકારી પ્રસંગે તેઓશ્રીના
પાવન પાદપંકજમાં શત શત વંદન હો !



ગુરુદેવ તો પોતે એક અલૌકિક દ્રવ્ય હતાં, અલૌકિક એમનું પરિણમન હતું ને
પુણ્યનો - વાણીનો યોગ પણ કોઈ અલૌકિક સાતિશય યોગ હતો. ગુરુદેવશ્રીને
શ્રુતની લબ્ધિ હતી. સાંભળનારને તો કાનમાં કોઈ અમૃતની ધાર કરતું હોય એવું
મીઠું લાગે. કેટલાક જીવોને તો એવું લાગ્યું છે કે જાણે કોઈ દૈવીવાણી આવે
છે !! એક અસાધારણ યુગપુરુષ જેવું ગુરુદેવનું વ્યક્તિત્વ હતું અને કર્તૃત્વ પણ
એવું જ હતું.

(-પૂજ્ય ભાઈશ્રી શશીભાઈ)